राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 4638/2022

अमित कश्यप पुत्र श्री मोतीलाल कश्यप, आयु लगभग 33 वर्ष, निवासी 13, ढींबर भोईवाड़ा, आदर्श चौक, उदयपुर, जिला उदयपुर, राजस्थान।

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. पंजाब नेशनल बैंक, प्रबंध निदेशक और मुख्य कार्यकारी अधिकारी के माध्यम से, कॉर्पोरेट और प्रधान कार्यालय प्लॉट संख्या 4, सेक्टर-10, द्वारका, नई दिल्ली।

2. सर्कल हेड सह अनुशासनात्मक प्राधिकारी, पंजाब नेशनल बैंक, वृत्त कार्यालय, मानव संसाधन विकास विभाग, जिला उदयपुर, राजस्थान।

3. प्रबंधक (शाखा प्रमुख), पंजाब नेशनल बैंक, बी.ओ. हिरन मगरी सेक. 4, जिला उदयपुर, राजस्थान।

----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री हरीश कुमार पुरोहित, श्री तुषार मोड

प्रतिवादी की ओर से : श्री जगदीश व्यास, श्री दीपक व्यास

माननीय श्री न्यायमूर्ति फरजंद अली

आदेश

रिपोर्ट करने योग्य

आदेश उच्चारित किया गया : 18/02/2025

आदेश सुरक्षित रखा गया : 21/09/2024

1. याचिकाकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत यह रिट याचिका दायर की है, जो दिनांक 17.02.2022 के आदेश (अनुलग्नक 9) से पीड़ित है, जिसके तहत उसके खिलाफ विभागीय जांच के परिणामस्वरूप "बिना नोटिस के बर्खास्तगी" की सजा दी गई है।

2. संक्षेप में, मामले के तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को दिनांक 29.03.2016 के आदेश द्वारा पंजाब नेशनल बैंक, वृत्त उदयपुर में अधीनस्थ कैडर (चपरासी/Peon) में

नियुक्त किया गया था, जिसके बाद उसे दिनांक 27.03.2017 के आदेश द्वारा चपरासी-सह-दफ्तरी के पद पर स्थाई कर दिया गया। याचिकाकर्ता को दिनांक 10.04.2002 के द्विपक्षीय समझौते के पैरा 14 के प्रावधानों के तहत दिनांक 05.12.2020 के आदेश द्वारा निलंबित किया गया और उसके बाद उसे दिनांक 24.12.2020 का कारण बताओ नोटिस दिया गया, जिसमें दो अनियमितताओं का आरोप लगाया गया: (1) कि उसने बिना किसी कार्यालय आदेश के ATM में अनधिकृत नकद लोडिंग की थी, और (2) कि उसके खाते में कई उच्च मूल्य/असामान्य लेनदेन थे। याचिकाकर्ता ने कारण बताओ नोटिस का जवाब देते हुए अपने कार्य को न्यायोचित ठहराया और खाते में लेनदेन की व्याख्या की। जवाब से असंतुष्ट होकर, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने याचिकाकर्ता को दिनांक 10.04.2002 के द्विपक्षीय समझौते के पैरा 5(j) के प्रावधानों के तहत दिनांक 10.06.2021 का आरोप पत्र (charge-sheet) सौंपा, जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ कारण बताओ नोटिस में उल्लिखित आरोपों के समान दो आरोप लगाए गए थे। याचिकाकर्ता ने 24.06.2021 को आरोप पत्र का विस्तृत जवाब प्रस्तुत किया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जवाब प्राप्त होने के बाद अनुशासनात्मक कार्यवाही के साथ आगे बढ़ने का फैसला किया और दिनांक 22.07.2021 के आदेश द्वारा जांच अधिकारी नियुक्त किया गया और याचिकाकर्ता के खिलाफ जांच शुरू की गई। जांच अधिकारी ने निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता दोनों आरोपों का दोषी था और तदनुसार, दिनांक 20.01.2022 की जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों को स्वीकार कर लिया और परिणामस्वरूप, दिनांक 29.01.2022 का कारण बताओ नोटिस याचिकाकर्ता को जारी किया, जिसमें द्विपक्षीय समझौते के पैरा 6(a) के अनुसार "बिना नोटिस के बर्खास्तगी" की सजा प्रस्तावित की गई थी। याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया, जिसके अनुसरण में वह 07.02.2022 को अपने बचाव प्रतिनिधि के साथ अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ और सजा के बिंदु पर पुनर्विचार की प्रार्थना करते हुए अपना लिखित अभ्यावेदन भी प्रस्तुत किया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 17.02.2022 के चुनौती दिए गए आदेश द्वारा याचिकाकर्ता पर "बिना नोटिस के सेवा से बर्खास्तगी" की सजा लगा दी। इससे व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका दायर की है।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी बैंक द्वारा की गई विभागीय जांच में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का घोर उल्लंघन हुआ है। याचिकाकर्ता ने जांच अधिकारी के समक्ष अपने कार्य और अपने खाते में लेनदेन को न्यायोचित ठहराते

हुए मौखिक और साथ ही दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए, लेकिन जांच अधिकारी ने उन्हें संज्ञान में नहीं लिया और निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता आरोपों का दोषी है, इस प्रकार, जांच कार्यवाही केवल एक औपचारिकता थी। इसके अलावा, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने स्वतंत्र रूप से दिमाग लगाए बिना जांच अधिकारी के निष्कर्षों को बस स्वीकार कर लिया और यह पता नहीं लगाया कि क्या आरोप किसी गंभीर कदाचार के थे या मामूली प्रकृति के थे, और सेवा से बर्खास्तगी की कठोर सजा दे दी।

4. आरोप संख्या 1 के संबंध में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उक्त आरोप निराधार है और इसका कोई आधार नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता, अधीनस्थ वर्ग का कर्मचारी होने के नाते, यानी चपरासी-सह-दफ्तरी (वर्ग IV), ने ATM मशीन के संचालन के संबंध में अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आदेशों/निर्देशों पर ही कार्य किया है। ATM मशीन को संचालित करने का कर्तव्य हालांकि याचिकाकर्ता को लिखित में नहीं सौंपा गया था, लेकिन बैंक में मौजूद वरिष्ठ अधिकारियों ने उसे ATM मशीन संचालित करने के लिए कहा था, जो इस तथ्य से परिलक्षित होता है कि ATM मशीन संचालित करने के लिए कुंजी और साथ ही पासवर्ड की आवश्यकता होती है, जो प्रत्येक बार बैंक के वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। इस प्रकार, ATM मशीन में नकद लोडिंग का कोई अनधिकृत कार्य का प्रश्न ही नहीं था क्योंकि उसने शाखा प्रमुख के निर्देशानुसार ही कार्य किया और नकद लोड करने के उद्देश्य से अन्य अधिकारियों के साथ एक सहायक के रूप में कर्तव्य निभाया है।

5. आरोप संख्या 2 के संबंध में, यह प्रस्तुत किया जाता है कि याचिकाकर्ता के वेतन खाते में जमा की गई राशि उसकी पत्नी की आय से संबंधित थी। याचिकाकर्ता की पत्नी के नाम पर एक नकद ऋण खाता है और राशि को उक्त खाते में जमा किया जाना था। हालाँकि, याचिकाकर्ता के वेतन खाते में उक्त राशि जमा करना अपने आप में कोई कदाचार गठित नहीं करता है जब याचिकाकर्ता ने इस संबंध में एक तर्कसंगत स्पष्टीकरण दिया है। याचिकाकर्ता ने किसी वाणिज्यिक गतिविधि में भाग नहीं लिया है और इस प्रकार, उसने किसी सेवा नियमों का उल्लंघन नहीं किया है। याचिकाकर्ता का यह भी निवेदन था कि उसके द्वारा अपने मकान के निर्माण के उद्देश्य से अपने जानकार व्यक्तियों से व्यक्तिगत ऋण के रूप में कुछ राशि ली गई थी।

6. सजा के बिंदु पर न्यायालय को संबोधित करते हुए, विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि यद्यपि यह दोषी कर्मचारी को सजा की मात्रा के संबंध में अनुशासनात्मक प्राधिकारी का विवेक है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वह ऐसी शक्ति का मनमाने ढंग से और अपनी मनमर्जी से प्रयोग कर सकता है, बल्कि सजा आरोपों की गंभीरता के अनुपात में अनुशासनात्मक प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि के आधार पर दोषी को दी जानी चाहिए। वह प्रस्तुत करते हैं कि याचिकाकर्ता पर सेवा से बर्खास्तगी की सजा लगाना पूरी तरह से मनमाना, अवैध, अपुष्ट और कानून की दृष्टि में असमर्थनीय है, क्योंकि यह द्विपक्षीय समझौते के पैरा 12(c) के प्रावधानों का घोर उल्लंघन है, जो यह प्रदान करता है कि सजा देते समय, अनुशासनात्मक प्राधिकारी कदाचार की गंभीरता, पिछले रिकॉर्ड और किसी भी अन्य उत्तेजक ली या शमनकारीली परिस्थितियों को ध्यान में रखेगा, जो मौजूद हो सकती हैं। वर्ग IV का कर्मचारी होने के नाते याचिकाकर्ता केवल वरिष्ठ अधिकारियों के आदेशों का पालन कर रहा था और किसी भी तरह से यह नहीं कहा जा सकता है कि ATM मशीन में नकद लोड करने का उसका कार्य बैंक के हितों को नुकसान पहुँचा सकता था या बैंक को गंभीर नुकसान में शामिल करने की संभावना थी। आरोप संख्या 2 में कथित कार्य को अधिक से अधिक याचिकाकर्ता की ओर से एक छोटी सी लापरवाही के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता को दी गई कठोर सजा आरोपों की गंभीरता के अत्यधिक अनुपातहीन है और इस न्यायालय के हस्तक्षेप की मांग करती है।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते हैं कि आरोपों की गंभीरता के अनुपातहीन होने के अलावा, याचिकाकर्ता पर लगाई गई सजा भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का भी उल्लंघन करती है क्योंकि उसी दिन जिस दिन याचिकाकर्ता को आरोप पत्र दिया गया था, बैंक के एक अन्य कर्मचारी, श्री केशव लाल मीणा, जो उसी बैंक में हेड कैशियर थे, को भी समान लेनदेन के लिए द्विपक्षीय समझौते के दिनांक 10.04.2002 के पैरा 5(j) के तहत आरोप पत्र दिया गया था और उनके खिलाफ समानांतर विभागीय जांच शुरू की गई थी, लेकिन उन्हें याचिकाकर्ता से कम सजा दी गई है, भले ही उनके खिलाफ आरोप प्रकृति में अधिक गंभीर थे और वह याचिकाकर्ता से वरिष्ठ रैंक के थे, उनकी जिम्मेदारियाँ भी अधिक थीं। उपरोक्त प्रस्तुतियों के साथ, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता रिट याचिका को स्वीकार करने की प्रार्थना करते हैं।

8. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए प्रस्तुतियों का जोरदार विरोध किया और प्रस्तुत किया कि यह सुस्थापित कानूनी स्थिति है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही के अभियोजन में घोर अनियमितता या प्रक्रिया में या आदेश में विकृति या गंभीर अवैधता के अभाव में, उच्च न्यायालय अपने रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अनुशासनात्मक कार्यवाही पर अपील न्यायालय के रूप में नहीं बैठेगा और संबंधित प्राधिकारी द्वारा किए गए तथ्यों के निष्कर्षों में सामान्य रूप से हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि दोषपूर्ण कारक मौजूद न हों। विचाराधीन मामले में, याचिकाकर्ता ने जांच करते समय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन या प्रक्रियात्मक अनियमितताओं के संबंध में अपने पक्ष में कोई मामला नहीं बनाया है, ताकि इसमें कोई हस्तक्षेप आकर्षित हो सके।

9. प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते हैं कि शाखा प्रमुख द्वारा याचिकाकर्ता को ATM मशीन में नकद भरने और उसे संचालित करने के लिए अधिकृत करते हुए कोई कार्यालय आदेश जारी नहीं किए गए थे। याचिकाकर्ता ने बिना किसी कार्यालय आदेश के दूसरे कर्मचारी के पासवर्ड का उपयोग करके ATM मशीन में नकद लोड करके अपनी अधिकारिता से परे कार्य किया और इस प्रकार, बैंक के हितों के प्रतिकूल कार्य किया। वह आगे प्रस्तुत करते हैं कि ATM मशीन से चाबी और गुप्त पिन नंबर का उपयोग करके उसे खोलने के बाद चोरी के संबंध में तत्कालीन शाखा प्रबंधक, श्री विवेक मीणा द्वारा पुलिस स्टेशन हिरन मगरी, उदयपुर में FIR संख्या 399/2020 दर्ज कराई गई थी। उक्त FIR में, जाँच के बाद, पुलिस ने अभियोजन स्वीकृति मांगी और फिर याचिकाकर्ता और एक अन्य व्यक्ति के खिलाफ IPC की धारा 381, 454 और 120-बी और आईटी अधिनियम की धारा 66-सी के तहत चालान दायर किया और मामला विचारण के लिए लंबित है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने कदाचार की गंभीरता, कर्मचारी के रिकॉर्ड और अन्य उत्तेजक और शमनकारी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और द्विपक्षीय समझौते के पैरा 12(c) के अनुरूप, चुनौती दिए गए सजा आदेश को पारित किया, जो पूरी तरह से वैध, न्यायसंगत और आरोपों की गंभीरता के अनुपात में है। एक अन्य कर्मचारी श्री केशव लाल मीणा के साथ समानता के दावे के संबंध में, विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि चूंकि दोनों कर्मचारियों के खिलाफ लगाए गए आरोप अलग-अलग हैं, इसलिए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 के प्रावधान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं होते हैं।

10. अपने प्रस्तुतियों के समर्थन में, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया:

1. स्टेट ऑफ यूपी और अन्य बनाम मनमोहन नाथ सिन्हा और अन्य *[(2009) 8 SCC 310]*

2. जनरल मैनेजर *(*ऑपरेशंस*)* स्टेट बैंक ऑफ इंडिया और अन्य बनाम आर. पेरियासामी *[(2015) 3 SCC 101]*

3. अपैरल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल बनाम ए.के. चोपड़ा *[AIR 1999 SC 625]*

4. रीजनल मैनेजर, यूपीएसआरटीसी बनाम होती लाल *[(2003) 3 SCC 605]*

11. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, प्रत्यर्थी बैंक के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और रिकॉर्ड पर रखी गई सामग्री और बार में उद्धृत निर्णयों का अवलोकन किया गया।

12. रिकॉर्ड पर रखी गई सामग्री के अवलोकन से पता चलता है कि दिनांक 24.12.2020 को याचिकाकर्ता को दो अनियमितताओं का आरोप लगाते हुए एक कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। उसने नोटिस का जवाब दिया, हालाँकि, उसके स्पष्टीकरण से असंतुष्ट होकर, प्रत्यर्थी बैंक ने उसे द्विपक्षीय समझौते के पैरा 5(j) के प्रावधानों के तहत दिनांक 10.06.2021 का आरोप पत्र जारी किया। आरोप पत्र में निम्नलिखित दो आरोप शामिल थे:

आरोप *01:* आपके द्वारा *ATM* मशीन में अनधिकृत रूप से कैश भरने का कार्य बिना किसी कार्यालय आदेश के किया गया।

आरोप *02:* आपके बैंक खाते संख्या-*3566000110069274* में अधिक मूल्य/असामान्य लेनदेन पाए गए हैं।

आपके द्वारा किया गया कृत्य अनुचित है और द्विपक्षीय समझौते के बिंदु क्र. *5(j)* के अनुसार है, जो इस प्रकार है*:*

पैरा *5(j)*

बैंक के हित के प्रतिकूल कोई भी कार्य करना या घोर लापरवाही जिसमें बैंक को गंभीर नुकसान हो या होने की संभावना हो।

13. याचिकाकर्ता ने आरोपों का खंडन करते हुए और अपने कार्य को न्यायोचित ठहराते हुए आरोप पत्र का विस्तृत जवाब प्रस्तुत किया। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जवाब पर विचार करने के बाद 22.07.2021 को जांच अधिकारी नियुक्त करने की

कार्यवाही की। जांच के दौरान, याचिकाकर्ता को नियमों के अनुसार सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया, जिसका उसने छह दस्तावेज प्रदर्शित करके और एक गवाह की जांच करके लाभ उठाया। याचिकाकर्ता को बचाव प्रतिनिधि की सहायता की भी अनुमति दी गई थी। जांच समाप्त होने के बाद, जांच अधिकारी ने दिनांक 20.01.2022 की अपनी रिपोर्ट अनुशासनात्मक प्राधिकारी को प्रस्तुत की, जिसमें यह निष्कर्ष दिया गया कि याचिकाकर्ता के खिलाफ दोनों आरोप सिद्ध हुए हैं। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की और 29.01.2022 को सजा के बिंदु पर याचिकाकर्ता को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया। याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई के साथ-साथ लिखित प्रस्तुतियाँ प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया गया था। अंततः, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता पर सेवा से बर्खास्तगी की सजा लगा दी।

14. यह सुस्थापित है कि न्यायालयों को विभागीय जांच में दर्ज तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए, सिवाय उन परिस्थितियों के जहाँ ऐसे निष्कर्ष स्पष्ट रूप से विकृत हों या रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के साथ घोर रूप से असंगत हों, या किसी साक्ष्य पर आधारित न हों। हालाँकि, यदि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है या वैधानिक नियमों का पालन नहीं किया गया है या अनुशासनात्मक प्राधिकारी को दुर्भावना जिम्मेदार ठहराई जा सकती है, तो न्यायालय निश्चित रूप से हस्तक्षेप कर सकते हैं।

15. उपरोक्त संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा **बी.सी. चतुर्वेदी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य *[1996 AIR 484]*** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किए गए हैं:

> "12. न्यायिक समीक्षा (Judicial review) एक निर्णय से अपील नहीं है, बल्कि उस तरीके की समीक्षा है जिससे निर्णय लिया गया है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति यह सुनिश्चित करने के लिए है कि व्यक्ति को उचित व्यवहार मिले और यह सुनिश्चित करने के लिए नहीं है कि प्राधिकारी जिस निष्कर्ष पर पहुँचता है वह न्यायालय की दृष्टि में आवश्यक रूप से सही है। जब किसी लोक सेवक द्वारा कदाचार के आरोपों पर जांच की जाती है, तो न्यायालय/अधिकरण यह निर्धारित करने से संबंधित होता है कि क्या जांच एक सक्षम अधिकारी द्वारा आयोजित की गई थी या क्या प्राकृतिक न्याय के नियमों का अनुपालन किया

गया था। क्या निष्कर्ष या निष्कर्ष कुछ साक्ष्यों पर आधारित हैं, जिस प्राधिकारी को जांच आयोजित करने की शक्ति सौंपी गई है, उसके पास तथ्य का निष्कर्ष या निष्कर्ष निकालने का क्षेत्राधिकार, शक्ति और प्राधिकार है। लेकिन वह निष्कर्ष कुछ साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए। न तो साक्ष्य अधिनियम के तकनीकी नियम और न ही उसमें परिभाषित तथ्य या साक्ष्य के प्रमाण के नियम, अनुशासनात्मक कार्यवाही पर लागू होते हैं। जब प्राधिकारी उस साक्ष्य को स्वीकार करता है और निष्कर्ष को उससे समर्थन प्राप्त होता है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी दोषी अधिकारी को आरोप का दोषी मानने का हकदार होता है। न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति में न्यायालय/अधिकरण साक्ष्य के मूल्यांकन करने और साक्ष्य पर अपने स्वयं के स्वतंत्र निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं करता है। न्यायालय/अधिकरण हस्तक्षेप कर सकता है जहाँ प्राधिकारी ने दोषी अधिकारी के खिलाफ प्राकृतिक न्याय के नियमों के असंगत तरीके से या जांच के तरीके को निर्धारित करने वाले वैधानिक नियमों के उल्लंघन में कार्यवाही की हो या जहाँ अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पहुँचा गया निष्कर्ष या तथ्य किसी साक्ष्य पर आधारित न हो। यदि निष्कर्ष या तथ्य ऐसा है जिस पर कोई भी उचित व्यक्ति कभी नहीं पहुँचा होगा, तो न्यायालय/अधिकरण निष्कर्ष या तथ्य में हस्तक्षेप कर सकता है, और राहत को इस प्रकार आकार दे सकता है कि वह प्रत्येक मामले के तथ्यों के लिए उपयुक्त हो।

13. अनुशासनात्मक प्राधिकारी तथ्यों का एकमात्र निर्णायक है। जहाँ अपील प्रस्तुत की जाती है, अपीलीय प्राधिकारी के पास साक्ष्य या सजा की प्रकृति का पुनर्मूल्यांकन करने की सह-विस्तृत शक्ति होती है। एक अनुशासनात्मक जांच में, कानूनी साक्ष्य का कठोर प्रमाण और उस साक्ष्य पर निष्कर्ष प्रासंगिक नहीं होते हैं।"

16. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए उच्च न्यायालय को जिन व्यापक मापदंडों के भीतर कार्य करना चाहिए और अनुशासनात्मक कार्यवाही से संबंधित मामलों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **यूनियन ऑफ इंडिया बनाम पी. गुनासेकरन [(2015) 2 SCC 610]** के मामले में निम्नानुसार प्रतिपादित किया:

"12. सुस्थापित स्थिति के बावजूद, यह दर्दनाक रूप से परेशान करने वाला है कि उच्च न्यायालय ने अनुशासनात्मक कार्यवाही में एक अपीलीय प्राधिकारी के रूप में कार्य किया है, यहाँ तक कि जांच अधिकारी के सामने के साक्ष्य का भी पुनर्मूल्यांकन किया है। आरोप I पर निष्कर्ष को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण द्वारा भी इसका समर्थन किया गया था। अनुशासनात्मक कार्यवाही में, उच्च न्यायालय पहली अपील के दूसरे न्यायालय के रूप में नहीं है और न ही कार्य कर सकता है। उच्च न्यायालय, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत अपनी शक्तियों के प्रयोग में, साक्ष्य का फिर से मूल्यांकन करने का जोखिम नहीं उठाएगा। उच्च न्यायालय केवल यह देख सकता है कि:

(a) क्या जांच एक सक्षम प्राधिकारी द्वारा कारित की गई है;

(b) क्या जांच उस संबंध में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार कारित की गई है;

(c) क्या कार्यवाही करने में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है;

(d) क्या प्राधिकारियों ने साक्ष्य और मामले के गुणों के सन्दर्भमें कुछ बाहरी विचारों से खुद को एक निष्पक्ष निष्कर्ष पर पहुंचने से अक्षम कर दिया है;

(e) क्या प्राधिकारियों ने खुद को अप्रासंगिक या बाहरी विचारों से प्रभावित होने दिया है;

(f) क्या निष्कर्ष, अपने आप में, इतना पूरी तरह से मनमाना और सनकी है कि कोई भी उचित व्यक्ति कभी भी ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा सके;

(g) क्या अनुशासनात्मक प्राधिकारी त्रुटिपूर्ण रूप से स्वीकार्य और महत्वपूर्ण साक्ष्य को स्वीकार करने में विफल रहा;

(h) क्या अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने त्रुटिपूर्ण रूप से अस्वीकार्य साक्ष्य को स्वीकार किया जिसने निष्कर्ष को प्रभावित किया;

(i) क्या तथ्य का निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है।

13. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत, उच्च न्यायालय:

(i) साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करेगा;

(ii) जांच में निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करेगा, यदि वह कानून के अनुसार आयोजित की गई है;

(iii) साक्ष्य की पर्याप्तता में नहीं जाएगा;

(iv) साक्ष्य की विश्वसनीयता में नहीं जाएगा;

(v) हस्तक्षेप नहीं करेगा, यदि कुछ कानूनी साक्ष्य हैं जिन पर निष्कर्ष आधारित हो सकते हैं।

(vi) तथ्य की त्रुटि को ठीक नहीं करेगा चाहे वह कितनी भी गंभीर क्यों न लगे;

(vii) सजा की अनुपातहीनता में नहीं जाएगा जब तक कि यह उसकी अंतरात्मा को झकझोर न दे।"

17. विचाराधीन मामले में उपरोक्त कसौटी को लागू करते हुए, यह न्यायालय इस सुविचारित राय का है कि यद्यपि याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने विभागीय जांच कार्यवाही में कुछ प्रक्रियात्मक चूक को इंगित करने की कोशिश की है, लेकिन उनमें से कोई भी इस न्यायालय को जांच रिपोर्ट में दिए गए और अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा स्वीकार किए गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए सहमत नहीं करता है। जांच संबंधित सेवा नियमों के अनुसार एक सक्षम प्राधिकारी द्वारा आयोजित की गई है। याचिकाकर्ता को अपना बचाव प्रस्तुत करने के लिए कई अवसर प्रदान किए गए थे, जो प्रक्रियात्मक निष्पक्षता के पालन को प्रदर्शित करता है। यह न केवल प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के साथ बैंक के अनुपालन को दर्शाता है, बल्कि अपनी स्थिति का बचाव करने में याचिकाकर्ता की सक्रिय भागीदारी को भी रेखांकित करता है। तथ्य का निष्कर्ष रिकॉर्ड पर उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विभिन्न न्यायिक घोषणाओं द्वारा जारी स्पष्ट दिशानिर्देशों के मद्देनजर, इस संबंध में याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय याचिकाकर्ता के उद्देश्य के लिए कोई मदद नहीं करते हैं। इस प्रकार, जांच कार्यवाही में हस्तक्षेप की मांग करने वाली याचिकाकर्ता द्वारा की गई प्रार्थना खारिज कर दी जाती है।

18. इस न्यायालय के समक्ष उठाया गया अगला मुद्दा याचिकाकर्ता को दी गई सजा की मात्रा से संबंधित है, जो लगाए गए आरोपों के अनुपातहीन है। इस संबंध में, मैंने प्रत्यर्थी बैंक के अधिकारियों और कर्मचारियों पर लागू द्विपक्षीय समझौते के दिनांक 10.04.2002 के प्रावधानों का अध्ययन किया है। द्विपक्षीय समझौते के पैरा 5(j) के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप पत्र जारी किया गया था, जो बैंक के हित के प्रतिकूल कोई भी कार्य करने या घोर लापरवाही या लापरवाही जिसमें बैंक को गंभीर नुकसान हो या होने की संभावना हो के लिए है। उक्त प्रावधान घोर कदाचार से संबंधित है।

19. आगे बढ़ने से पहले, विभागीय कार्यवाही में सजा की मात्रा की न्यायिक समीक्षा के दायरे के संबंध में प्रासंगिक कानून पर चर्चा करना उचित होगा।

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **नरेश चंद्र भारद्वाज बनाम बैंक ऑफ इंडिया और अन्य *[AIR 2019 SC 2075]*** में, अनुशासनात्मक कार्यवाही में सजा की मात्रा के मामले में संवैधानिक न्यायालयों द्वारा न्यायिक हस्तक्षेप के दायरे पर कानून पर चर्चा करते हुए कहा कि सजा की मात्रा के मुद्दे पर न्यायालयों का क्षेत्र बहुत सीमित है। यह अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी है, जो किए गए कदाचार की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए सजा की प्रकृति तय करता है। इसका अर्थ यह नहीं होगा कि यदि सजा इतनी अनुपातहीन है कि वह न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर देती है, तो न्यायालयों को इसमें हस्तक्षेप करने के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है। सामान्य तौर पर ऐसे मामलों में भी यह उपयुक्त हो सकता है कि मामले को अनुशासनात्मक/अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पुनर्विचार के लिए वापस भेज दिया जाए। हालांकि, हस्तक्षेप का एक अन्य कारण हो सकता है जहाँ उठाया गया तर्क सजा में समानता (parity) का हो, लेकिन तब पूर्व-अपेक्षा यह होगी कि समानता लगाए गए आरोपों की प्रकृति में होनी चाहिए और दोषी कर्मचारी के खिलाफ सिद्ध होनी चाहिए और घटना के बाद कर्मचारी के आचरण में होनी चाहिए।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने रणजीत ठाकुर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य. [(1987) 4 SCC 611] में, निम्नानुसार कहा:

> "न्यायिक समीक्षा सामान्य तौर पर, किसी निर्णय के विरुद्ध निर्देशित नहीं होती है, बल्कि 'निर्णय लेने की प्रक्रिया' के विरुद्ध निर्देशित होती है। सजा के चयन और

मात्रा का प्रश्न कोर्ट-मार्शल के क्षेत्राधिकार और विवेक के भीतर है। लेकिन सजा अपराध और अपराधी के अनुरूप होनी चाहिए। यह प्रतिशोधी या अनावश्यक रूप से कठोर नहीं होनी चाहिए। यह अपराध के अनुपात में इतनी अधिक नहीं होनी चाहिए कि यह अंतरात्मा को झकझोर दे और अपने आप में पूर्वाग्रह के निर्णायक साक्ष्य के समान हो। आनुपातिकता का सिद्धांत (The doctrine of proportionality), न्यायिक समीक्षा की अवधारणा के एक भाग के रूप में, यह सुनिश्चित करेगा कि यहाँ तक कि एक पहलू पर भी, जो अन्यथा, कोर्ट-मार्शल के विशेष क्षेत्र के भीतर है, यदि न्यायालय का निर्णय, यहाँ तक कि सजा के संबंध में भी, तर्क की एक घोर अवहेलना है, तो सजा सुधार से प्रतिरक्षित नहीं होगी। तर्कहीनता और विकृति न्यायिक समीक्षा के मान्यता प्राप्त आधार हैं।"

22. **प्रेम नाथ बाली बनाम रजिस्ट्रार, दिल्ली उच्च न्यायालय और अन्य** ***[AIR 2016 SC 101]*** में, माननीय शीर्ष न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:

"24. यह कानून का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि एक बार दोषी कर्मचारी के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध हो जाते हैं, तो यह नियुक्ति प्राधिकारी पर निर्भर करता है कि नियमों के अनुसार दोषी कर्मचारी पर क्या सजा लगाई जानी चाहिए। नियुक्ति प्राधिकारी, आरोपों की प्रकृति और गंभीरता, जांच अधिकारी के निष्कर्षों, दोषी कर्मचारी के संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड और दोषी से संबंधित सभी प्रासंगिक कारकों को ध्यान में रखते हुए, अपने विवेक का प्रयोग करता है और फिर नियमों में प्रदान की गई सजा लगाता है।

25. एक बार जब नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा सजा लगाने में (चाहे वह मामूली हो या बड़ी) ऐसे विवेक का प्रयोग किया जाता है, तो न्यायालय सजा की मात्रा में हस्तक्षेप करने में धीमे होते हैं और केवल दुर्लभ और उपयुक्त मामले में ही सजा को प्रतिस्थापित करते हैं।

26. ऐसी शक्ति का प्रयोग तब किया जाता है जब न्यायालय पाता है कि दोषी कर्मचारी यह सिद्ध करने में सक्षम है कि उस पर लगाई गई सजा पूरी तरह से अनुचित, मनमानी और सिद्ध आरोपों की गंभीरता के अनुपातहीन है, जिससे न्यायालय की अंतरात्मा झकझोर जाती हो या जब नियमों का उल्लंघन में पाया जाता हो। न्यायालय, ऐसे मामलों में, नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा मूल रूप से दोषी कर्मचारी को नियमों के अनुसार प्रदान की गई सजा के विपरीत कोई अन्य सजा

लगाने के लिए मामले को नियुक्ति प्राधिकारी को वापस भेज सकता है या नियुक्ति प्राधिकारी को वापस भेजने के बजाय स्वयं सजा को प्रतिस्थापित कर सकता है।"

23. अब विचाराधीन मामले पर आते हैं, याचिकाकर्ता के खिलाफ दो आरोप लगाए गए हैं। पहला आरोप यह है कि उसने बिना किसी कार्यालय आदेश के अनधिकृत रूप से ATM मशीन में नकदी लोड की। उस तारीख का कोई उल्लेख नहीं है जिस पर उसने उक्त कार्य किया। याचिकाकर्ता चपरासी-सह-दफ्तरी के रूप में काम कर रहा था, जो वर्ग IV का पद है। ATM मशीन में नकदी लोड करने की प्रक्रिया के लिए न केवल नकदी की आवश्यकता होती है, बल्कि पासवर्ड और कुंजी की भी आवश्यकता होती है। उन बैंकों में, जहाँ उक्त कार्य आउटसोर्स नहीं किया जाता है, पासवर्ड और कुंजी ATM के संरक्षक होने के नाते, सख्ती से बैंक के अधिकारियों की हिरासत में रहते हैं और लोड की जाने वाली नकदी बैंक के अधिकारियों द्वारा प्रदान की जानी होती है। यह उचित रूप से माना जा सकता है कि बैंक का वर्ग IV का कर्मचारी बैंक के अधिकारियों से कोई आदेश लिए बिना और नकदी लोड करने के लिए इतना दर्द उठाकर अपनी मर्जी से उपरोक्त सभी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकता है। यह याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क को पुष्ट करता है कि याचिकाकर्ता ATM में नकदी लोड करने के लिए बैंक के अधिकारियों के निर्देशों के तहत कार्य कर रहा था और इस प्रकार, याचिकाकर्ता के कार्य की गंभीरता कम हो जाती है।

24. द्विपक्षीय समझौते का पैरा 5(j) घोर कदाचार के कार्य को बैंक के हित के प्रतिकूल कोई भी कार्य करने या घोर लापरवाही या लापरवाही जिसमें बैंक को गंभीर नुकसान हो या होने की संभावना हो के रूप में परिभाषित करता है। यह समझ से परे है कि ATM में नकदी लोड करना किस प्रकार बैंक के हितों के प्रतिकूल हो सकता है या बैंक को गंभीर नुकसान में शामिल कर सकता है। आरोप पत्र, जांच रिपोर्ट और सजा का आदेश किसी भी धोखाधड़ी, गबन या धन के दुरुपयोग के बारे में बात नहीं करता है, बल्कि ये सभी दस्तावेज़ केवल ATM में नकदी की अनधिकृत लोडिंग के बारे में बताते हैं। चूंकि ATM मशीन में लोड की गई सभी नकदी का हमेशा लेखा-जोखा होता है, इसलिए बैंक को नुकसान होने का कोई मौका नहीं हो सकता है। जहाँ तक याचिकाकर्ता की ओर से लापरवाही का संबंध है, इस न्यायालय की सुविचारित राय है कि याचिकाकर्ता, एक चपरासी होने के नाते, बैंक के अधिकारियों से किसी निर्देश या आदेश के बिना और नकदी के साथ-साथ पासवर्ड और कुंजी प्रदान किए बिना अपनी मर्जी से

ATM में कथित अनधिकृत लोडिंग करने की स्थिति में नहीं था। ATM के संरक्षक होने के नाते बैंक के संबंधित अधिकारियों की ATM में नकदी लोड करने के लिए प्रदान की गई प्रक्रिया का पालन करने की पूरी जिम्मेदारी थी और याचिकाकर्ता को उनके कर्तव्य की उपेक्षा के लिए बलि का बकरा बनने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। जहाँ तक कोई आधिकारिक आदेश नहीं होने का संबंध है, याचिकाकर्ता का रुख विचार करने योग्य है कि वह वर्ग IV का कर्मचारी होने के नाते शाखा प्रमुख द्वारा सौंपे गए सभी कर्तव्यों को निभाने के लिए बाध्य था और वह अपने द्वारा किए गए प्रत्येक कर्तव्य के लिए आधिकारिक आदेश मांगने की स्थिति में नहीं था और उसकी ओर से कोई भी अवज्ञा उसे मुश्किल में डाल सकती थी।

25. याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप संख्या 2 उसके बैंक खाते में उच्च मूल्य/असामान्य लेनदेन के संबंध में है। इस संबंध में, याचिकाकर्ता ने स्पष्टीकरण दिया है कि उक्त राशि मकान की मरम्मत और निर्माण के उद्देश्य से उसके ज्ञात व्यक्तियों से ऋण के रूप में ली गई थी। प्रत्यर्थियों ने यह आरोप नहीं लगाया है कि उक्त राशि किसी गबन या अवैध कार्य से संबंधित है, इस प्रकार, भले ही बैंक के नियमों का कोई उल्लंघन हो, इसे बर्खास्तगी की कठोर सजा को आकर्षित करने वाला प्रमुख कदाचार नहीं माना जा सकता है। जाहिरा तौर पर, याचिकाकर्ता को मुख्य रूप से आरोप संख्या 1 के कारण सेवा से बर्खास्तगी की सजा दी गई है।

26. यह सच है कि बैंक के किसी भी नियम के उल्लंघन को अनदेखा नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, एक दोषी को सजा देते समय, मामले की परिस्थितियों, आरोप की गंभीरता और दोषी के पिछले रिकॉर्ड को ध्यान में रखा जाना चाहिए। अनुशासनात्मक प्राधिकारी अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करता है और उसके पास सजा की मात्रा के संबंध में विवेक होता है। हालाँकि, ऐसा विवेक पूरी तरह से निरंकुश नहीं होता है। सजा को दोष के अनुपात में दिया जाना चाहिए। धन के गबन या व्यक्तिगत लाभ जैसे आरोपों की अनुपस्थिति याचिकाकर्ता के मामले को अधिक गंभीर कदाचार से महत्वपूर्ण रूप से अलग करती है जिसके लिए आमतौर पर कठोर दंड की आवश्यकता होती है। आनुपातिकता का सिद्धांत आवश्यक बनाता है कि सजा कदाचार की गंभीरता के अनुरूप हो। यहाँ, याचिकाकर्ता के कार्यों में, यद्यपि प्रक्रियात्मक नियमों का उल्लंघन है, कोई आपराधिक इरादा या बैंक के वित्तीय स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव का अभाव है। इसलिए, सेवा से बर्खास्तगी की सजा लगाना अनुपातहीन प्रतीत होता है। इस न्यायालय की राय में, विचाराधीन मामले में याचिकाकर्ता के दोष के लिए, दी गई सजा बहुत

कठोर है और आरोपों की गंभीरता के अनुरूप नहीं है और इस प्रकार, गलत कार्य और सजा की मात्रा के बीच अपर्याप्त आनुपातिकता ने इस न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर दिया है।

27. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का एक और तर्क यह है कि याचिकाकर्ता को सजा के मामले में भेदभाव का शिकार बनाया गया है। इस संबंध में, उन्होंने बताया है कि इसी तरह का मामला श्री केशव लाल मीणा से संबंधित है, जो उसी बैंक के हेड कैशियर थे, और जिन पर उसी लेनदेन के संबंध में द्विपक्षीय समझौते के पैरा 5(j) के तहत विभागीय कार्यवाही की गई थी और उनके खिलाफ समानांतर जांच आयोजित की गई थी; हालाँकि, जांच समाप्त होने के बाद उन्हें बहुत कम सजा, यानी वेतनमान में 02 चरणों तक 02 साल की अवधि के लिए निम्न स्तर पर लाया जाना, दी गई है। उक्त दोषी, याचिकाकर्ता से रैंक में बहुत ऊपर होने के नाते क्योंकि वह हेड कैशियर थे, की जिम्मेदारियाँ अधिक थीं, फिर भी उनके मामले में उदार दृष्टिकोण अपनाया गया है, जबकि याचिकाकर्ता के मामले में कठोर सजा लगाई गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता, एक निम्न रैंकिंग कर्मचारी होने के नाते, वास्तविक दोषियों को बचाने और प्रत्यर्थी बैंक में प्रचलित स्पष्ट प्रक्रियात्मक चूकों पर पर्दा डालने के लिए उदाहरण बनाने के लिए चुना गया है। हालाँकि यह सच है कि याचिकाकर्ता अन्य अनुशासनात्मक जांच में दोषी के संबंध में अनुशासनात्मक जांच में सजा के मामले में समानता का दावा नहीं कर सकता है, लेकिन तथ्य यह है कि अर्ध-न्यायिक शक्तियों वाले अनुशासनात्मक प्राधिकारी को अपने निहित विवेक का न्यायिक रूप से प्रयोग करना होता है और इस तरह से नहीं कि कम गंभीर आरोपों के लिए कठोर सजा दी जाए और अधिक गंभीर आरोपों के लिए एक व्यक्ति को कम सजा दी जाए, वह भी उसी मामले में। अधिक गंभीर अपराध के प्रति यह तुलनात्मक उदारता बैंक के अनुशासनात्मक उपायों में निरंतरता के बारे में प्रश्न उठाती है, जो याचिकाकर्ता की सजा के पुनर्मूल्यांकन के तर्क को मजबूत करती है। उपरोक्त उदाहरण ने भी इस निष्कर्ष पर पहुँचने में योगदान दिया है कि याचिकाकर्ता को दी गई सजा अधिक है और आरोपों की गंभीरता के अनुपात में नहीं है।

28. सेवा से बर्खास्तगी की सजा न केवल याचिकाकर्ता के करियर को अचानक समाप्त करती है, बल्कि उसे सेवा लाभों से भी वंचित करती है, जिससे गंभीर वित्तीय और पेशेवर कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। एक अधिक मापा हुआ दंड अनुशासन बनाए रखने में पर्याप्त होगा, जिससे याचिकाकर्ता को एक गरिमापूर्ण पेशेवर स्थिति बनाए रखने की अनुमति मिले। रणजीत ठाकुर (उपरोक्त) और नरेश चंद्र भारद्वाज (उपरोक्त) जैसे

मामलों का संदर्भ न्यायपालिका के रुख को रेखांकित करता है कि सजा इतनी अनुपातहीन नहीं होनी चाहिए कि वह न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर दे। ये मिसालें याचिकाकर्ता की सजा में संयम के तर्क को मजबूत करती हैं। एक प्राधिकारी, जिसके पास कुछ बिंदुओं पर विवेक है, उसे अपनी सनक और कल्पनाओं, मनमाने ढंग से, विकृत रूप से या सनकी ढंग से और स्पष्ट रूप से भेदभावपूर्ण तरीके से अपने विवेक का प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, बल्कि ऐसे विवेक का न्यायिक रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए। विवेक के प्रयोग में समानता और समान व्यवहार दिखाया जाना चाहिए। प्रत्यर्थी बैंक, भारत सरकार की एक इकाई होने के नाते, उपरोक्त मानदंडों का पालन करने की अपेक्षा की जाती है। यह न्यायालय इस तथ्य से अवगत है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में सजा की मात्रा के मामले में न्यायिक समीक्षा का दायरा सीमित है और हस्तक्षेप संयम से किया जाना है। हालाँकि, वर्तमान एक ऐसा मामला है जिसमें यह महसूस किया जाता है कि दोषी को दी गई सजा अत्यधिक, मनमानी, आरोपों की गंभीरता के पूरी तरह से अनुपातहीन और भेदभावपूर्ण भी है, जो न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर देती है और इसे इसमें हस्तक्षेप करने के लिए प्रेरित करती है।

29. याचिकाकर्ता के खिलाफ बैंक की राशि की चोरी करने के लिए प्राथमिकी दर्ज किए जाने के प्रभाव का जवाब में उठाया गया तर्क, जिसमें जाँच के बाद सक्षम न्यायालय में आरोप पत्र दायर किया गया है, को ध्यान में नहीं लिया जा सकता है, बल्कि यह कहना पर्याप्त होगा कि विभाग द्वारा जारी आरोप पत्र में याचिकाकर्ता के खिलाफ ऐसा कोई आरोप नहीं लगाया गया है और एक दोषी को उस आरोप के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है जो उसके खिलाफ नहीं लगाया गया है और जिसके लिए बचाव का कोई अवसर नहीं दिया गया है।

30. नतीजतन, रिट याचिका स्वीकार की जाती है। प्रत्यर्थी बैंक के अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 17.02.2022 के चुनौती दिए गए आदेश (अनुलग्नक 9) को याचिकाकर्ता को 'बिना नोटिस के बर्खास्तगी' की सजा देने की सीमा तक रद्द किया जाता है। मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को वापस भेजा जाता है ताकि वह विभागीय जांच के अनुसरण में दी गई सजा की मात्रा के संबंध में पुनर्विचार कर सके और बर्खास्तगी/सेवा से हटाने/सेवा मुक्ति या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के अलावा, आरोपों की गंभीरता के अनुपात में याचिकाकर्ता को उपयुक्त सजा देते हुए एक नया आदेश पारित कर सके।

31. इस आदेश की एक प्रति प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर प्रत्यर्थियों द्वारा इस आदेश का अनुपालन किया जाए।

(फरजंद अली), जे.

112-प्रमोद/-

अस्वीकरण:- स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय केवल वादियों के अपनी भाषा में लाभ के लिए हैं तथा इनका किसी अन्य उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता। निर्णय का अंग्रेजी संस्करण सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए प्रामाणिक होगा और इसे लागू करने में प्राथमिकता दी जाएगी।

एडवोकेट विष्णु जांगिड़